Historicity Research Journal
Volume 2 | Issue 1 | Sept 2015 **ISSN:- 2393-8900**

Research Article

उत्तरशती के यात्रा–साहित्य में पर्यावरणीय समस्या

डॉ. विक्रम रामचंद्र पवार
देशभक्त संभाजीराव गरड महाविद्यालय मोहोळ

प्रस्तावना –

प्रकृति की संपन्नता का चित्रण करते समय उत्तरशती के यात्राकारों का ध्यान पर्यावरणीय समस्याओं की ओर भी गया है। आज अत्यधिक जनसंख्या के कारण भारत जैसे देशों में तथा अत्यधिक यांत्रिकीकरण के कारण प्रगत राष्ट्रों के सम्मुख पर्यावरणीय समस्याएँ उपस्थित हो रही हैं। मानव हित की दृष्टि से पर्यावरण संरक्षण नितांत आवश्यक है।

मनुष्य के जीवनयापन हेतु प्रकृति का अत्यंत महत्व है "इसके बावजूद निरंतर उसकी चेष्टा यही रही है कि वह ज्ञान–विज्ञान की अपनी सामूहिक उद्यमशीलता के बल पर प्रकृति को पूर्णतः अपने वश में कर ले। भूगर्भ और अंतरिक्ष के असंख्य रहस्यों को अनावृत्त करने के क्रम में मनुष्य ने मानो यह समझ–सा लिया है कि पृथ्वी–तल को वह प्रायः विजय कर चुका है। उसकी अनेक 'शोध' क्रियाएँ एक तरह से 'प्रतिशोध' क्रियाएँ हैं जो सिद्ध करती हैं कि मनुष्य प्रकृति का पुत्र होकर संतुष्ट नहीं, वह प्रकृति का शत्रु बनता रहा है, उसने न केवल प्रकृति को अपने अनुकूल बनाना चाहा, अपितु स्वयं प्रकृति के प्रतिकूल जाने का संकल्प भी किया है।" प्रकृति के प्रति अनास्था का भाव मनुष्य के सम्मुख कई प्रश्न उपस्थित करता है।

नदी, तालाब, झील आदि मीठे पानी के प्रमुख स्रोतों को भी मनुष्य ने अपने मल–जल से अत्यंत दूषित कर दिया है। श्री नरेश मेहता जी के अनुसार–"उत्तरप्रदेश के ओर की कगार पर ही कुछ मठ–मंदिर थे जहाँ से प्रकाश तो नहीं लेकिन संध्याआरती के घंटे–घड़ियाल तथा कीर्तन सुनाई दे रहे थे। हर मठ–मंदिर की अपनी सीढ़ियाँ और घाट थे जिन पर किनारे के पेड़ झुके पड़े रहे थे। कहीं–कहीं कोई स्नान करता या बर्तन माँजना दिख जाता था। यहीं पर बस्ती का शायद गंदानाला मंदाकिनी में मिलता है इसीलिए हवा में तेज बदबू का भभका था तथा मंदाकिनी के ठहरे जल में बुदबुदाते फफोले उठे हुए थे। मनुष्य की विकृति न तो प्रकृति की पवित्रता देखती है और न रम्यता, और उस पर से यह दावा कि इस सृष्टि में मनुष्य ही श्रेष्ठ है।" अपने हाथों से ही मनुष्य अपने अन्न में विष मिला रहा है।

प्रदूषण की समस्या आज किसी एक देश की नहीं बल्कि समस्त विश्व की समस्या बन गई है–"पर्यावरण प्रदूषण औद्योगिक युग का एक अनिवार्य अभिशाप है, इस सच्चाई की निंदा भले ही की जाए, इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता और जर्मनी ही क्या किसी भी औद्योगिक राष्ट्र का नागरिक औद्योगिक सभ्यता की आगमतलबी का अब इतना अधिक आदी हो चुका है कि वह पर्यावरण–प्रदूषण के खिलाफ बस केवल विरोध ही कर सकता है, उसे ठुकरा नहीं सकता। यानी दूषित पर्यावरण में रहना, जीना और मरना उसके लिए जरूरी हो गया है।" प्रदूषण केवल वर्तमान काल की नहीं बल्कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी अत्यंत घातक है।

अनेक प्रदूषक पदार्थ हजारों सालों के बाद ही नष्ट होते हैं–"स्टील के कंटेनर पूरी तरह 95 वर्ष में नष्ट होते हैं, प्लास्टिक को नष्ट होने में 220 वर्ष लगते हैं, अल्यूमीनियम 495 वर्ष में नष्ट होता है और काँच को पूरी तरह समाप्त होने में दस लाख वर्ष लगते हैं। अतः ऐसे प्रदूषक मनुष्य एवं अन्य प्राणियों के लिए नितांत घातक होते हैं।

इसी प्रकार इन प्रदूषकों को विनष्ट करने की समस्या आज विकराल रूप ले चुकी है। जर्मनी में बोतलों को "धोने और साफ करने का अर्थ हमारे यहाँ से भिन्न है। वे वैज्ञानिक ढंग से सफाई करते हैं। बोतलों को तोड़कर दोबारा उस कांच का भी उपयोग वे नहीं करते, क्योंकि एक बार उपयोग किया गया काँच यदि दोबारा काम में लाया जाए तो वह सफेद नहीं, हरा होगा। हरा काँच अच्छा नहीं माना जाता और कोई कंपनी उसे लेने को तैयार नहीं होती। बोतलें समंदर में फेंक दी जाती हैं। यह समस्या पूरे यूरोप में है–कई देशों ने 'विचार

कमीशन' बैठाए हैं, बोतलों का क्या किया जाए!" बोतलों को समुद्र में फेंकने से जल–प्रदूषण तो होता ही है साथ ही समुद्री जीव एवं वनस्पतियों का विनाश होता है।

आज वनों का अनियंत्रित दोहन भी एक समस्या है। वनों की कटान की वैज्ञानिकता पर प्रकाश डालते हुए श्री प्रदीप पंत जी लिखते हैं–"वन–विभाग के एक वरिष्ठ अधिकारी बताते हैं–"पेड़ों की कटान बिलकुल न करना उतना ही अवैज्ञानिक है जितना कि पेड़ों की अंधाधुंध कटान करना। जिस तरह हम अपने घरों की क्यारियों और बगीचों की कटाई, छँटाई और सफाई करते हैं, उसी प्रकार वनों की भी काटछाँट करनी आवश्यक होती है। कम से कम बूढ़े पेड़ तो काटने ही चाहिए।".....तभी याद आता है, देहरादून से पहाड़ों की ओर रवाना होते समय 'भारतीय वन अनुसंधान संस्था' में वन विभाग के निदेशक श्री आर. सी. घोष से भेंट हुई थी। उन्होंने नपे तुले शब्दों में कहा था–"वनों के वैज्ञानिक प्रबंध की माँग है कि उन्हें न तो बेहिसाब काटा जाए और न बिना काटे छोड़ दिया जाए। हाँ, यह बात अवश्य गाँठ बाँध लेनी चाहिए कि वृक्षों की वार्षिक कटान उनकी वार्षिक वृद्धि दर की तुलना में अधिक नहीं होनी चाहिए।" इस प्रकार सरकारी अनास्था तथा नियमों का उलंघन कर भारत में अत्यंत वनविनाश किया जाता है।

पेड़–पौधों का प्रदूषण, बाढ़ जैसी समस्याओं की रोकथाम में भी महत्वपूर्ण योग होता है। पेकिंग में "मंगोलिया के रेगिस्तानों से पीली आँधी यहाँ अक्सर आती है। पहले तो धूल भी आती थी। अब जब से रास्ते में जंगल लगा दिए गए हैं और पेकिंग में भी पेड़ों की चार–चार कतारें लगा दी गयी हैं, तब से धूल कम हो गई है।" अतः पर्यावरण संरक्षण में पेड़ महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

वृक्षारोपण का कार्य एक सामाजिक मूल्य के रूप में प्रचारित एवं क्रियान्वित होना चाहिए। श्री गोविंद मिश्र जी के अनुसार गुजरात की रण में "नए पेड़ लगाए गए हैं जिनमें एक नीम का पेड़ जरुर है। छोटे हैं अभी ये पेड़, लेकिन दस–बीस साल बाद अपनी पूरी छटा पर आएँगे। तब हम कहाँ होंगे.....यह सोचने लगिए तो पेड़ ही न लगाइए। अगर नीम जैसे पौधे को पेड़ बनने में बीसेक साल लगते हैं तो भी शुरुआत तो कहीं–न–कहीं करनी ही होगी?''

इसी प्रकार सामान्य जनता में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जनचेतना जागृत करना नितांत आवश्यक है। इसके लिए सरकारी एवं सामाजिक स्तर पर प्रयास होने चाहिए–"पश्चिम जर्मनी पहुँच कर पता चला कि 'ग्रीन्स पार्टी' अपने उत्तर प्रदेश के पर्वतीय अंचल के 'चिपको आंदोलन' की पर्याय जैसी है। 'चिपको आंदोलन' पेड़ों की निर्मम कटान के विरुद्ध आरंभ हुआ था। पश्चिम जर्मनी में पेड़ों की निर्मम कटान की समस्या तो नहीं है, किंतु 'चिपको' और 'ग्रीन्स' दोनों ही पर्यावरण को हरा–भर बनाने के प्रति समर्पित हैं, दोनों ने पर्यावरण–प्रदूषण की समस्या के खिलाफ जनचेतना जागृत करने की दिशा में पहल की है।"

पर्यावरण संरक्षण हेतु प्रत्येक नागरिक का सक्रिय सहयोग नितांत आवश्यक है।

प्रदूषण नियंत्रण हेतु कठोर कानून सुव्यवस्था का संचालन नितांत आवश्यक है। पोर्ट ब्लेयर के कई आइलैंडों पर "प्रशासन किसी को वहाँ रुकने की अनुमति नहीं देता।

लोग एक–एक कर नौका से वापस जाने लगे है। सबने खा–पी कर अपना–अपना सामान समेट लिया है। सख्त हिदायत है–कोई भी चीज द्वीप में न छोड़ी जाए, कागज का एक टुकड़ा भी नहीं, पोलीथीन का एक बैग भी नहीं। इन चीजों से पर्यावरण को क्षति पहुँचती है और समुद्र में उद्यान सरीखे कोरल्स नष्ट होते हैं। और आश्चर्य कि निहायत अनुशासन–विहीन हम हिंदुस्थानी एक–एक चीज उठा कर ले जा रहे हैं–थैलियाँ, कागज, बियर की बोतलें वगैरह–आज्ञाकारी बच्चों की तरह।" प्रशासन भी सतर्कता बरते तो उसके अच्छे परिणाम अवश्य ही नजर आते हैं।

इस प्रकार उत्तरशती के यात्राकारों ने पर्यावरण को एक मूल्य के रूप में प्रस्तुत किया है। आज की पर्यावरणीय समस्याओं की ओर दृष्टिपात करते हुए उन्होंने पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकताओं की ओर भी ध्यान आकृष्ट किया है।

संदर्भ ग्रंथ

१. सफरी झोले में अजितकुमार
2. साधु न चलै जमात नरेश मेहता
3. लौटने से पहले प्रदीप पंत
4. महादेश की दुनिया प्रदीप पंत

5. सैलानी की डायरी	राजेंद्र अवस्थी
6. यात्राचक्र	धर्मवीर भारती
7. परतों के बीच	गोविंद मिश्र